❑ डा0 प्रेम सुमन जैन

जैन साहित्य और उसका हिन्दी से सम्बन्ध

सांस्कृतिक महत्व :

देश की विभिन्न भाषाओं में जैन साहित्य उपलब्ध है। अत: उसमें विभिन्न प्रान्तों की सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना के महत्वपूर्ण तथ्य उपलब्ध होते हैं। ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों से लेकर वर्तमान युग तक जैन साहित्य का निरन्तर सृजन होता रहा है, अत: विभिन्न युगों के सांस्कृतिक परिवर्तनों का साक्षी जैन साहित्य है। जैन साहित्य में उपलब्ध सांस्कृतिक तथ्यों की प्रामाणिकता इसलिये स्वीकार्य है कि ये जन-जीवन से जुड़े हुए हैं। केवल आदर्श या काल्पनिक उड़ानें उसमें नहीं हैं। वह दरबारी साहित्य नहीं है। उसके लेखक अधिकांश साधक आचार्य हैं, जिनकी कथनी-करनी की प्रामाणिकता उनके साहित्य में भी प्रतिबिम्बित हुई है।

जैन साहित्य में वर्णित संस्कृति के विभिन्न आयाम हैं। उसमें दर्शन और अध्यात्म के गूढ़ रहस्यों का उद्घाटन है। सिद्धांतों का विशद प्रतिपादन है। मुनि एवं गृहस्थ-जीवन का विस्तार से वर्णन है। इस सबको प्रस्तुत करने के लिए विभिन्न कथाओं, दृष्टान्तों एवं उपाख्यानों का मनोहारी चित्रण है। किन्तु इस सबके भीतर कुछ ऐसी सांस्कृतिक सूचनाएं भी हैं, जो अन्य भारतीय साहित्य में उपलब्ध नहीं हैं। इतिहास जिनके सम्बन्ध में प्राय: मौन है, उन्हीं तथ्यों की ओर जैन साहित्य के पाठकों का ध्यान आचार्यों ने आकर्षित किया है। इससे भारत के सांस्कृतिक विकास की सही जानकारी में मदद मिल सकती है।

प्राकृत एवं अपभ्रंश साहित्य में कथावस्तु एवं पात्रों का चयन जन-जीवन में से किया गया है। अत: इस साहित्य में समाज के समृद्ध और शक्तिशाली व्यक्तियों का ही चित्रण नहीं है, अपितु सर्वहारा, दीन-हीन और उपेक्षित समझे जाने वाले उन व्यक्तियों के जीवन का भी चित्रण है, जो चरित्र एवं सौहार्द के धनी हैं। जैन लेखकों की इस उदार और सर्वग्राही दृष्टि के कारण जैन साहित्य में पहली बार सूक्ष्मता से ग्राम्य संस्कृति का चित्रण हो सका है। इससे भारतीय साहित्य कृत्रिमता और विलासी जीवन से बहुत हद तक मुक्त हुआ है। आंचलिकता को महत्व देने के कारण जैन साहित्य ने विभिन्न प्रदेशों की लोक-संस्कृति की सुरक्षा की है। अनेक जातियों के जीवन-क्रम को नष्ट होने से बचा लिया है।

किसी भी साहित्य में संस्कृति के संवाहक उसके शब्द होते हैं। जैन साहित्य का एक यह महत्वपूर्ण पक्ष है कि उसमें लोक प्रचलित शब्दों और भाषा के प्रयोग का विशेष महत्व दिया गया है। इस कारण देश की उस शब्द सम्पदा को जैन साहित्य ने सुरक्षित रखा है, जो मनुष्य के सांस्कृतिक विकास को अपने में छुपाये हुए है। भारतीय भाषाओं का इतिहास तब तक पूरा नहीं लिखा जा सकता जब तक जैन साहित्य का भाषात्मक विवेचन न किया जाय। इन सब पहलुओं पर चिन्तन-मनन किया जाना अपेक्षित है। पिछले पचास वर्षों में जैन साहित्य के कई ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं। विश्वविद्यालयों में जैन ग्रन्थों पर शोध-प्रबन्ध भी लिखे गये हैं, किन्तु अभी भी नई दृष्टि से कार्य किया जाना शेष है।

सर्व प्रथम जैन साहित्य पर शोध-कार्य की प्राथमिकता अन्य भारतीय साहित्य के साथ उसके अन्तरंग सम्बन्धों की दी जानी चाहिए। जैन साहित्य की कई विधाएं भारतीय साहित्य से घनिष्ठ सम्बन्ध रखती हैं। कथावस्तु, कथारूढ़ियों, कवि-सम्प्रदाय, वस्तुवर्णनों आदि में जैन साहित्य और अन्य भारतीय साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन किया जाना अपेक्षित है। हिन्दी साहित्य के साथ तो इस प्रकार का अध्ययन और भी उपयोगी होगा। क्योंकि हिन्दी साहित्य और जैन साहित्य में गहरा सम्बन्ध है।

हिन्दी साहित्य से सम्बन्ध :

हिन्दी साहित्य और जैन साहित्य के पारस्परिक सम्बन्ध की जानकारी के लिए भारतीय भाषाओं और साहित्य के विकास क्रम को जानना आवश्यक है। इस देश में प्रारम्भ से ही लोक भाषाओं में साहित्य लिखा जाता रहा है। पाली, प्राकृत और अपभ्रंश जैसी जनभाषाओं ने साहित्य को पर्याप्त समृद्ध किया है। इस साहित्य की धारा से भारत की आधुनिक भाषाओं-राजस्थानी, गुजराती, मराठी आदि का साहित्य प्रभावित हुआ है। इन सभी भाषाओं के साहित्य ने भाषा, शैली और स्वरूप की दृष्टि से हिन्दी साहित्य को प्रभावित किया है। अत: हिन्दी साहित्य का सम्बन्ध किसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूप में इस देश की प्राचीन और अर्वाचीन भाषाओं के साथ रहा है। चूंकि जैन कवियों ने देश की प्राय: सभी भाषाओं में विविध प्रकार का विपुल साहित्य लिखा है। अत: स्वाभाविक है कि जैन साहित्य की इस सुदीर्घ परम्परा से हिन्दी साहित्य प्रभावित होता रहा है। प्राकृत, अपभ्रंश और राजस्थानी भाषाओं के जैन साहित्य से तो हिन्दी साहित्य का सीधा सम्बन्ध है। हिन्दी साहित्य के विकास का जो समय जाना-माना जाता है उस युग में जैन कवियों ने अनेक विधाओं में हिन्दी साहित्य भी लिखा है। अत: परम्परा, विकास स्वरूप और भाषा की दृष्टि से हिन्दी साहित्य जैन साहित्य के साथ जुड़ा हुआ है।

हिन्दी साहित्य में जो काव्य रूप प्राप्त होते हैं उनमें रासो साहित्य और चरितकाव्य प्रसिद्ध हैं। अपभ्रंश साहित्य में जो प्रबंध काव्य लिखे गये हैं, उनका हिन्दी के रासो साहित्य में सीधा संबंध है। रासो का प्रारम्भिक रूप प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य में प्राप्त है, जिसका कथा और नृत्य के साथ सम्बन्ध था। हिन्दी साहित्य में उसने प्रबंधात्मक रूप ग्रहण कर लिया। जैन कवियों ने रासो साहित्य की शैली में कई रचनाएं लिखी है, जिन्हें पृथ्वीराजरासो आदि के साथ रखा जा सकता है।

हिन्दी साहित्य में प्रबंध काव्यों के अन्तर्गत प्रेमाख्यानक काव्य बहुत लिखे गए हैं जिनमें अनेक लोक-कथाएं प्रेम कथाओं के रूप में प्रस्तुत की गई हैं। इन प्रेम कथाओं के लौकिक रूप प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य में प्राप्त होते हैं। तरंगवती कथा, लीलावइकहा, रयणसेहरीकहा आदि प्राकृत कथाएं एवं भविसत्त कहा, विलासवईकहा, जिणदत्तचरिउ, सुदन्सणचरिउ आदि अपभ्रंश कथाएं हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्यों की आधार भूमि मानी जा सकती हैं। ढोला मारु रा दोहा की कथा में जिन कथ्य-रूपों और कथानक रूढ़ियों का प्रयोग मिलता है, वे सब अपभ्रंश कथाओं में प्राप्त होते हैं। यहां तक कि यह ढोला शब्द भी प्राकृत के दूलह और अपभ्रंश से हिन्दी के दूल्हा तक पहुंचा है।

हिन्दी के प्रसिद्ध ग्रंथ रामचरित मानस का अपभ्रंश साहित्य से घनिष्ठ संबंध है। सातवीं आठवीं शताब्दी के अपभ्रंश महाकवि स्वयंभू के पउमचरिउ में जिस प्रकार से रामकथा को उपस्थित किया गया है, तुलसीदास ने उसी प्रकार रामचरितमानस में राम कथा को प्रस्तुत किया है। दोनों ने रामकथा की उपमा नदी से की है। रामकथा सरोवर का रूपक, विनयप्रदर्शन, सज्जन-दुर्जन वर्णन, दोहा और चौपाई जैसे छंदों का प्रयोग राम के लौकिक रूप की प्रधानता, विभिन्न वर्णनों की शैली में एकरूपता तथा मानस में लगभग 60 प्रतिशत प्राकृत-अपभ्रंश शब्दों का प्रयोग, इस बात का सूचक है कि तुलसीदास ने जैन साहित्य में प्रचलित रामकथा को हिन्दी युग तक पहुंचाया है। इस प्रकार हिन्दी के प्रबंध काव्यों के तलस्पर्शी अध्ययन के लिए जैन साहित्य के प्रबंध काव्यों का मूल्यांकन अपरिहार्य है।

हिन्दी साहित्य में छंद और अलंकारों का जो प्रयोग हुआ है वे अधिकांश प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य से आए हैं। अपभ्रंश में विभिन्न छंदों को मिलाकर एक नवीन छंद के प्रयोग करने की प्रवृत्ति अधिक थी। छप्पय, वस्तु, रड्डा, कुंडलियां आदि इसी प्रकार के मात्रिक छंद हैं, जिनका हिन्दी साहित्य में खूब प्रयोग हुआ है। हिन्दी साहित्य में तुलसीदास की कवितावली और केशवदास की रामचंद्रिका में इन छन्दों का प्रयोग किया गया है। विभिन्न छंदों के प्रयोग को दिखाने की प्रवृत्ति अपभ्रंश साहित्य में भी थी। सुदंशण चरिउ में 70 छंदों का प्रयोग हुआ है तथा जिनदत्तचरिउ में 30 छंदों का प्रयोग है। इसी तरह की छंद बहुला अपभ्रंश रचनाओं ने हिन्दी साहित्य में काव्यात्मक रचनाओं के सृजन को प्रेरित किया होगा।

मुक्तक काव्य की परम्परा :

हिन्दी साहित्य में अनेक मुक्तक काव्य प्राप्त होते हैं। कबीर, विद्यापति, तुलसी, मीरा, बिहारी आदि कवियों ने भक्ति, उपदेश, नीति, शृंगार आदि विषयों के लिए मुक्तक काव्यों का सृजन किया है। इन काव्यों में प्राय: दोहा छंद का प्रयोग किया गया है। यह दोहा छंद प्राकृत के गाथाछंद का विकसित रूप माना जाता है, जिसका प्रयोग पहली शताब्दी के प्राकृत कवि हाल से लेकर मध्ययुग तक अनेक जैन कवियों ने किया है। गाथासप्तशती और बज्जालग्ग, पाहुणदोहा जैसे मुक्तक काव्यों से हिन्दी में मुक्तक काव्य स्वरूप और विषय की दृष्टि से प्रेरणा ग्रहण करते रहे हैं। गाथासप्तशती और बिहारीसतसई में तो अद्भुत समानता है।

हिन्दी साहित्य के कई ग्रंथों के कथानकों पर भी जैन साहित्य का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। जायसी के पद्मावत पर प्राकृत अपभ्रंश कथाओं का स्पष्ट प्रभाव है। जायसी ने देश आदि तथा ऋतु आदि के जो वर्णन किए हैं, उनको पढ़कर लगता है कि अपभ्रंश कथा साहित्य से अवश्य परिचित थे। पद्मावत की नायिका पद्मिनी को सिंघल द्वीप का बताया गया है। प्राकृत और अपभ्रंश के लगभग 12 कथाग्रंथों की नायिकाएं सिंघल द्वीप की होती हैं तथा उसे प्राप्त करने के वर्णन भी प्राय: वही हैं जो पद्मावत में दिए गए हैं। जायसी के 100 वर्ष पूर्व के प्राकृत कथाकार जिनहर्षगणि की रयणसंहरनिवकहा और पद्मावत की कथा के अध्ययन से तो ऐसा लगता है कि जायसी ने इस प्राकृत ग्रंथ को अवश्य देखा था। इस तरह विभिन्न अभिप्रायों, कथा-रूढ़ियों और कथारूपों का यदि अध्ययन किया जावे तो जैन साहित्य और हिन्दी साहित्य के कथानकों के संबंध पर नया प्रकाश पड़ सकता है।

हिन्दी के संत साहित्य और भक्ति साहित्य पर भी जैन साहित्य का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। प्राकृत और अपभ्रंश युग में अनेक ऐसे संत हुए हैं, जिन्होंने भक्ति धारा को प्रवाहित किया है। जैन साधक योगेन्द्र मुनि, रामसिंह कवि, आनन्दघन एवं सुप्रभाचार्य आदि ऐसे साधक हुए हैं, जिन्होंने बाह्य आडम्बरों का खण्डन कर मन की शुद्धि पर बल दिया है। हिन्दी की संत धारा में भी इस प्रकार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के संत हुए हैं। अपभ्रंश संत योगीन्द्र कहते हैं कि न देवालय में, न शिला में, न आलेखन में, न चित्र में भगवान है, किन्तु अलख निरंजन और ज्ञानमय शिव शांत चित्त में स्थित है।

देउ ण देवले णनि सिलए न वि लिप्पइ णवि चित्ति।
अखखु णिरंजण णत्तणमउ, सिउ संठिउ समचिति।

इसी तरह कबीर ने भी कहा है कि जगह-जगह ईश्वर नहीं है। मन का ईश्वर ही सब जगह है जैसे—

साधो एक रूप मन मांही।
अपने मन विचारिकै देखो, कोउ दूसरो नाही।।

इसी तरह जैन संतों ने जाति प्रथा के खंडन में कहा है कि सभी आत्माएं समान हैं। उनमें से कोई छुद्र नहीं है और न कोई ब्राह्मण और न शूद्र है। भट्टारक शुभचन्द्र तत्वसारदोहा में कहते हैं कि—

बम्हण क्षत्रिय वैश्य न शूद्र।
अप्पाराजा नवि होई छुद्र।।

कबीरदास भी यही बात कहते हैं कि—

एक बिन्दु तै दोऊ उपजै, को बाहमन को सूदा।

कबीरदास एक ही मन को गोरख, गोविन्द और ओघढ़ आदि नामों से पुकारते हैं। जैन कवि आनन्दघन ने स्वयं आत्मा को ही विभिन्न नामों से कहा है जैसे—

राम कहो रहमान कहो कोऊ, कान कहो महादेव री।
पारसनाथ कहो कउ ब्रह्मा, सकल ब्रह्म स्वयमेव री।।

भाजनभेद कहावत नाना, एकमृत्तिका रूपरी।
तैसे खण्ड कल्पना रोपित, आप अखंड स्वरूपरी।। इसी तरह जैन और हिन्दी साहित्य के प्राय: सभी संत कवियों ने अपने-अपने आराध्य को मुक्ति प्राप्ति का आधार माना है। तुलसीदास कहते हैं कि राम की भक्ति के बिना संसार का दु:ख कैसे मिटेगा—

रघुपति भक्ति सत्संगति बिनु, को भवत्रास नसावै।

जैन कवि बनारसीदास कहते हैं—

जगत में सो देवन को देव।
जासु चरन परसैं इन्द्रादिक, होय मुक्ति स्वमेव।

कवि घानतराय कहते हैं—

जो तुम मोख देत नहीं हमको, कहां जाये किहि डेरा।

महाकवि सूरदास कहते हैं—

सूरदास वृत यहै, कृष्णभजिभवजल-निधि उतरत।

इस प्रकार हिन्दी साहित्य की विकास यात्रा के विभिन्न सोपान जैन साहित्य की आधार भूमि पर टिके हैं। उपलब्ध प्राकृत, अपभ्रंश, राजस्थानी और हिन्दी के जैन साहित्य के गवेषणात्मक अध्ययन से हिन्दी साहित्य के विकास को नई गति मिल सकती है। जैन साहित्य जन-सामान्य में अधिक प्रचलित हो सकता है। ऐसे गहन अध्ययन से साहित्य के माध्यम से देश के सांस्कृतिक इतिहास को नई दृष्टि मिल सकती है।

—अध्यक्ष, जैनविद्या एवं प्राकृत विभाग
सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org